पाणिनि : भाषाविज्ञान

... बलदेवानन्द सागर

उपक्रम

भगवान् भाष्यकार आदिशङ्कराचार्य अद्वैत-सिद्धान्त को आधे श्लोक में बताते हुए कहते हैं -

श्लोकार्धेन कथयामि यदुक्तं ग्रन्थ-कोटिभिः |

ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः ||

अर्थात् जो बात, करोड़ो ग्रन्थों ने कही है उसको मैं आधे श्लोक में कहता हूँ कि ब्रह्म सत्य है, संसार मिथ्या है और जीव, ब्रह्म के सिवा और कुछ नहीं है |

भगवान् भाष्यकार तो साक्षात् शिवावतार हैं, वे कह सकते हैं | मैं उनका आश्रय लेकर यह कहने का साहस कर सकता हूँ कि मेरे वक्तव्य विषय 'पाणिनि : भाषाविज्ञान' को कलिपावनावतार गोस्वामी तुलसीदासजी के श्रीरामचरितमानस के मङ्गलाचरण के मात्र प्रथम श्लोक से ही विश्लेषित करने का विनम्र प्रयास कर सकता हूँ | श्लोक, हम सब जानते हैं-
'वर्णानामर्थ-सङ्घानां रसानां छन्दसामपि |

मङ्गलानाञ्च कर्त्तारौ वन्दे वाणी-विनायकौ ||'

[अर्थात् वर्णों, अर्थ-समूहों, रसों, छन्दों और मंगलों के कर्त्ता - वाणी तथा विनायक का मैं वन्दन करता हूँ]

इस मंगलाचरण श्लोक में गोस्वामीजी ने जो वर्ण, वाणी और विनायक की बात कही है, उसमें वर्ण-समाम्नाय [वर्णमाला-माहेश्वर-सूत्र], वाणी [भाषा] और विनायक [लिपि] का उल्लेख भी अन्तर्निहित है | महामुनि पाणिनि के नव्य-व्याकरण का और आधुनिक भाषाविज्ञान का विचारणीय विषय भी वर्ण और अर्थ-समूह ही है |

माहेश्वर सूत्र अर्थात् शिवसूत्र-जाल

आज इक्कीसवीं शताब्दी के इस दूसरे दशाब्द में सूचना-तकनीकी ने हमारे व्यष्टि और समष्टि जीवन को बहुत प्रभावित किया है | internet [अन्तर्जाल] और electronic media

[वैद्युदाणविक-माध्यम] के कारण हम www. [वर्ल्ड् वाइड् वेब् = विश्व-व्यापि-जाल] से घिरे हुए हैं किन्तु भौतिक विज्ञान द्वारा निर्मित यह जाल भारत के सदियों पुराने जाल का अनुकरण-मात्र है |

माहेश्वर सूत्रों की व्याख्या के रूप में 'नन्दिकेश्वरकाशिका' के २७ पद्य मिलते हैं | इसके रचयिता नन्दिकेश्वर ने अपने इस व्याकरण और दर्शन के ग्रन्थ में शैव अद्वैत दर्शन का वर्णन किया है, साथ ही, माहेश्वर सूत्रों की व्याख्या भी की है। उपमन्यु ऋषि ने इस पर 'तत्त्वविमर्शिणी' नामक टीका रची है। इनमें से अतिप्रसिद्ध यह पद्य 'माहेश्वर-सूत्रों' के अवतरण की कथा सुनाता हैं -

'नृत्तावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नवपञ्चवारम्।

उद्धर्तुकामः सनकादिसिद्धानेतद्विमर्शे शिवसूत्रजालम्॥'

... [नन्दिकेश्वरकाशिका-१]

[अर्थात् सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार आदि सिद्धों के उद्धार हेतु देवाधिदेव नटराजराज शिव ने ताण्डव-नृत्त के बाद नौ और पाँच [चौदह] बार डमरू बजाया, इस प्रकार चौदह शिवसूत्रों की ध्वनियों से यह शिवसूत्र-जाल [स्वर-व्यंजनरूपी वर्णमाला] प्रकट हुयी।]

पाणिनीय-व्याकरण के इन सूत्रों के आदि-प्रवर्तक भगवान् नटराज को माना जाता है। ऐसी प्रसिद्धि है कि महर्षि पाणिनि ने ये सूत्र देवाधिदेव शिव के आशीर्वाद से प्राप्त किये जो कि पाणिनीय संस्कृत व्याकरण के आधार बने।

ये चौदह सूत्र इस प्रकार हैं -

१. अइउण् २. ऋलृक् ३. एओङ् ४. ऐऔच्

५. हयवरट् ६. लण् ७. ञमङणनम् ८. झभञ्

९. घढधष् १०. जबगडदश् ११. खफछठथचटतव्

१२. कपय् १३. शषसर् १४. हल्

इन १४ सूत्रों में संस्कृत भाषा के वर्णों (अक्षरसमा- म्नाय) को एक विशिष्ट प्रकार से संयोजित किया गया है। फलतः पाणिनि को शब्दों के निर्वचन या नियमों में जब

भी किन्ही विशेष वर्ण समूहों (एक से अधिक) के प्रयोग की आवश्यकता होती है, वे उन वर्णों (अक्षरों) को माहेश्वर सूत्रों से प्रत्याहार बनाकर संक्षेप में ग्रहण करते हैं। माहेश्वर सूत्रों को इसी कारण 'प्रत्याहार विधायक' सूत्र भी कहते हैं। अष्टाध्यायी के अध्ययन के समय प्रत्याहार बनाने की विधि तथा संस्कृत व्याकरण में उनके बहुविध प्रयोगों को देखा जा सकता है ।

इन १४ सूत्रों में संस्कृत भाषा के समस्त वर्णों का समावेश किया गया है। प्रथम ४ सूत्रों (अइउण् – ऐऔच्) में स्वर वर्णों तथा शेष १० सूत्रों में व्यंजन वर्णों की गणना की गयी है। संक्षेप में स्वर वर्णों को अच् एवं व्यंजन वर्णों को हल् कहा जाता है। अच् एवं हल् भी प्रत्याहार हैं।

व्याकरण क्या है ?

आइए, संक्षिप्त सिंहावलोकन से देखते हैं कि वैदिक वाङ्मय को जानने-समझने और समझाने के लिए वेदों के छः अंगों [-शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष] को जानना-समझना कितना आवश्यक है | व्याकरण वेदांग को वेद-पुरुष का मुख कहा जाता है---"मुखं व्याकरणं स्मृतम् ।" वेदांगों में व्याकरण का मुख्य स्थान है---"प्रधानं च षट्सु अङ्गेषु व्याकरणम् ।" (महाभाष्य)

व्याकरण के द्वारा वेद और लोक के शब्दों की व्याख्या की जाती है, इसके विना वेद को समझना सरल नहीं है - 'व्याक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दाः अनेनेति व्याकरणम् ।' सर्वप्रथम व्याकरण की अनुश्रुति वेद में होती है -

'चत्वारि शृंगास्त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य ।

त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महोदेवा मर्त्याम् आविवेश ।।'

(ऋग्वेद- ४.५८.३)

[अर्थात् इस वृषभ रूपी व्याकरण के चार सींग (नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात) हैं । इसके तीन पाद (भूत, वर्त्तमान, भविष्यत्) हैं । इसके दो शिर (सुप् और तिङ्) हैं । इसके सात हाथ (सात विभक्तियाँ) हैं। यह उरस्, कण्ठ और मूर्धा इन तीन स्थानों से बँधा हुआ शब्द करता है ।]

इसके बाद वैदिक व्याकरण का सर्वप्रथम विवेचन प्रातिशाख्यों में मिलता है जिसके छः विषय है- (१) वर्ण-समाम्नाय (२) पदविभाग (३) सन्धि-विच्छेद (४) स्वर-विचार (५) पाठ-विचार (६) अन्य उच्चारण सम्बन्धी विषयों का विवेचन ।

अष्टाध्यायी और मुनि-त्रयम्

वैदिक व्याकरण के बाद लौकिक व्याकरण का उदय हुआ । आदिकाव्य वाल्मीकि-रामायण के किष्किन्धा-काण्ड में श्रीराम, श्रीहनुमान् जी के विषय में लक्ष्मण से कहते हैं-

'नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन बहुधा श्रुतम् |

बहु व्याहरतानेन न किञ्चिदपशब्दितम् || - [किष्किन्धाकाण्ड - ३/२९]

[अर्थात् निश्चितरूप से इसने सम्पूर्ण व्याकरण को भी सुना है, क्योंकि इसने बहुत बोला परन्तु कहीं भी व्याकरण की दृष्टि से एक भी अशुद्धि नहीं हुई |]

लौकिक व्याकरण के प्रमुख आचार्य हैं - पाणिनि । इनके व्याकरण का नाम है--- अष्टाध्यायी । इसमें कुल आठ अध्याय हैं । सभी में चार-चार पाद है, कुल ३२ पाद हैं जिनमें लगभग ३९९२ सूत्र हैं । उनके बाद कात्यायन मुनि ने इसके ऊपर वार्तिकों की रचना की, जिसकी संख्या भी चार हजार के आस-पास है । महर्षि पतञ्जलि ने इन वार्तिकों के ऊपर "महाभाष्य" की रचना की । इन तीनों को 'मुनित्रयम्' और इनके शब्दशास्त्र को "त्रिमुनि-व्याकरणम्" कहा जाता है ।

पाणिनि-व्याकरण की जीवन्त परम्परा

वामन और जयादित्य ने मिलकर अष्टाध्यायी के ऊपर एक वृत्ति लिखी जिसका नाम है - काशिका । इसके ऊपर जिनेन्द्रबुद्धि ने न्यास नामक एक व्याख्या लिखी थी । हरदत्तमिश्र ने भी इसके ऊपर पदमञ्जरी नामक व्याख्या लिखी । महाभाष्य के बाद व्याकरण का दार्शनिक ग्रन्थ भर्तृहरि ने वाक्यपदीयम् नाम से लिखा । सम्पूर्ण महाभाष्य पर कैयट ने प्रदीप नाम से एक टीका लिखी । महाभाष्य पर अन्य अनेक टीकाएँ लिखी गईं । उनमें से प्रदीप पर नागेश भट्ट ने उद्योत नाम से बृहद् व्याख्या लिखी है । बाद में आगे चलकर प्रक्रिया ग्रन्थों की शुरुआत हुई । रामचन्द्र इसके पुरोधा थे। इस क्रम में भट्टोजिदीक्षित रचित सिद्धान्तकौमुदी बहुत प्रसिद्ध है ।

व्याकरण का प्रयोजन

वैसे तो शब्दशास्त्र [व्याकरण] के प्रयोजनों की विस्तार से व्याख्या की गई है किन्तु रक्षा, ऊह, आगम, लघ्वर्थम् तथा असन्देहार्थम् - ये पाँच प्रमुख प्रयोजन माने गए हैं । इसके अतिरिक्त १३ अन्य प्रयोजन भी गिनाये गए हैं ।

महर्षि शाकटायन ने ऋक्तन्त्र में लिखा है कि व्याकरण का कथन ब्रह्मा ने बृहस्पति से किया, बृहस्पति ने इन्द्र से, इन्द्र ने भरद्वाज से, भरद्वाज ने ऋषियों से और ऋषियों ने ब्राह्मणों से किया । इसका उल्लेख तैत्तिरीय-संहिता (६.४.७.३) में भी मिलता है । पहले वाणी अव्याकृत थी ।देवताओं की प्रार्थना पर सर्वप्रथम इन्द्र ने इसकी व्याख्या की - 'बृहस्पतिश्च वक्ता, इन्द्रश्च अध्येता, दिव्यं वर्षसहस्रमध्ययनकालः। अन्तं च न जगाम ।" (महाभाष्य)

इसके बाद महेश (शिव) का व्याकरण भी मिलता है जो कि समुद्र के समान विस्तृत था । बोपदेव ने व्याकरण के आठ सम्प्रदायों का उल्लेख किया है -

इन्द्रश्चन्द्रः काशकृत्स्नापिशली शाकटायनः ।

पाणिन्यमरजैनेन्द्राः जयन्त्यष्टादिशाब्दिकाः ।।"

कुछ व्याकरण लुप्त हो गए हैं, जैसे कि व्याडि का संग्रह नामक व्याकरण ।

पाणिनि का प्रतिपाद्य विषय

महामुनि पाणिनि का प्रतिपाद्य विषय 'वर्ण' ही है | वर्ण को अक्षर भी कहते हैं जो स्वर-व्यंजन के रूप में पहचाने जाते हैं | उन्हों ने वर्णों को व्यवस्थित करके पद, शब्द और वाक्य की संरचना का जो वैज्ञानिक भाषाशास्त्र दिया, उसका नाम है - 'अष्टाध्यायी' | 'अष्टाध्यायी' वैसे तो संस्कृत-व्याकरण का ग्रन्थ है लेकिन बिना अष्टाध्यायी के अध्ययन के आधुनिक भाषावैज्ञानिक भी 'भाषाविज्ञान' के गूढ़ रहस्यों को उद्घाटित करने में असमर्थ हैं| इस गूढ़ रहस्य के विषय का कलिपावना- वतार गोस्वामी तुलसीदास जी ने बहुत सोद्देश्य और गंभीरता के साथ अनुभव किया और श्रीरामचरितमानस के मङ्गलाचरण के प्रथम श्लोक में इस तथ्य को परोक्षरूप से विश्लेषित किया है- 'वर्णानामर्थ-सङ्घानां रसानां छन्दसामपि | मङ्गलानाञ्च कर्त्तारौ वन्दे वाणी-विनायकौ ||'- ऐसा वर्णन करके |

पाणिनि का समन्वयात्मक दृष्टिकोण

अष्टाध्यायी में आठ अध्याय हैं | प्रत्येक अध्याय में चार पाद हैं। प्रत्येक पाद में प्रस्तुत विषय के अनुसार कम अथवा अधिक सूत्र-संख्या है। कुल सूत्र-संख्या तकरीबन चार हज़ार हैं | अत्यन्त संक्षेप में कहे हुए नियम अथवा विधान को सूत्र कहते हैं। अत्यन्त संक्षिप्त होना ही पाणिनीय सूत्रों का सबसे निराला वैशिष्ट्य है। उस संक्षेप के लिए महर्षि

पाणिनि ने एक स्वतन्त्र पद्धति तैयार की है। फलस्वरूप सूत्रों की अधिकांश रचना अत्यधिक तकनीकी और लोक व्यवहार की भाषा से भिन्न हो गई है।

अष्टाध्यायी के सूत्र की भाषा संस्कृत होते हुए भी संस्कृत भाषा के अच्छे ज्ञानमात्र से सूत्रार्थ का ज्ञान असम्भव है | यद्यपि 'अष्टाध्यायी' से संस्कृत-व्याकरण बहुत संक्षिप्त हो गया है, बल्कि कुछ हद तक दुर्बोध भी हो गया है, फिर भी एक-एक सूत्र से बड़ा शब्द समूह सिद्ध हो जाता है। यह एक बड़ा लाभ है।

आचार्य पाणिनि ने जिस व्याकरण शास्त्र का प्रवचन किया, वह न केवल तत्कालीन संस्कृत भाषा का नियामक शास्त्र बना, अपितु उसने आगामी संस्कृत रचनाओं को भी प्रभावित किया। पाणिनि से पूर्व भी व्याकरण शास्त्र के अन्य आचार्यों ने इस विशाल संस्कृत भाषा को नियमों में बांधने का प्रयास किया था, परन्तु पाणिनि का शब्दशास्त्र, विस्तार और गाम्भीर्य की दृष्टि से इन सभी में सिरमौर सिद्ध हुआ। पाणिनि ने अपनी गहन अन्तदृर्ष्टि, समन्वयात्मक दृष्टिकोण, एकाग्रता, कुशलता, दृढ़ परिश्रम और विपुल सामग्री की सहायता से जिस अनूठे व्याकरण शास्त्र का उपदेश दिया, उसे देखकर बड़े से बड़े विद्वान् आश्चर्य चकित होकर कहने लगे - 'पाणिनीयं महत्सुविरचितम्' - पाणिनि का शास्त्र महान्, सुव्यवस्थित और सुविरचित है; 'महती सूक्ष्मेक्षिका वर्तते सूत्रकारस्य' - उनकी दृष्टि अत्यन्त पैनी है; 'शोभना खलु पाणिनेः सूत्रस्य कृतिः' - उनकी रचना अति सुन्दर है; 'पाणिनिशब्दो लोके प्रकाशते' - सारे लोक में पाणिनि का नाम छा गया है, इत्यादि। भाष्यकार मुनि पतंजलि ने पाणिनि को प्रमाणभूत आचार्य, माङ्गलिक आचार्य, सुहृद्, भगवान् आदि विशेषणों से सम्बोधित किया है। उनके अनुसार पाणिनि के सूत्र में एक भी शब्द अनर्थक नहीं हो सकता और पाणिनीय शास्त्र में ऐसा कुछ नहीं है जो निरर्थक हो। उन्होंने जो सूत्र बनाए हैं, वे बहुत ही चिन्तन-मनन करके बनाए गए हैं। उन्होंने सुहृद् के रूप में व्याकरण शास्त्र का अन्वाख्यान किया है। रचना के समय उनकी दृष्टि भविष्य की ओर थी और वह दूरतर की बात सोचते थे। इस प्रकार उनकी प्रतिष्ठा बच्चे-बच्चे तक फैल गई और विद्यार्थियों में उन्हीं का व्याकरण सर्वाधिक प्रिय हुआ।

पाणिनि का संक्षिप्त जीवन परिचय

पाणिनि (५०० ई॰पू॰) संस्कृत भाषा के सबसे बड़े वैयाकरण हुए हैं। पाणिनि का जन्म शलातुर नामक ग्राम में हुआ था जो तत्कालीन उत्तर-पश्चिम भारत के गान्धार में स्थित

था। उसे अब लहुर कहते हैं। अपने जन्मस्थान के अनुसार पाणिनि, शालातुरीय भी कहे गए हैं और अष्टाध्यायी में स्वयं उन्होंने इस नाम का उल्लेख किया है।

पाणिनि के गुरु का नाम उपवर्ष, पिता का नाम पणिन और माता का नाम दाक्षी था। पाणिनि जब बड़े हुए तो उन्होंने व्याकरणशास्त्र का गहरा अध्ययन किया। पाणिनि से पहले शब्दविद्या के अनेक आचार्य हो चुके थे। उनके ग्रन्थों को पढ़कर और उनके परस्पर भेदों को देखकर पाणिनि ने निश्चय किया कि उन्हें व्याकरणशास्त्र को व्यवस्थित करना चाहिए।

अष्टाध्यायी की उपादान [उपजीव्य] सामग्री

पाणिनि से पूर्व वैदिक संहिताओं, शाखाओं, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद् आदि का जो विस्तार हो चुका था, उस वाङ्मय से उन्होंने अपने लिये शब्दसामग्री ली, जिसका उन्होंने अष्टाध्यायी में उपयोग किया है। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात, निरुक्त और व्याकरण की जो सामग्री पहले से विद्यमान थी उसका उन्होंने संग्रह और सूक्ष्म अध्ययन किया। इसका प्रमाण भी अष्टाध्यायी में है, जैसा कि शाकटायन, शाकल्य, भारद्वाज, गार्ग्य, सेनक, आपिशलि, गालब और स्फोटायन आदि आचार्यों के मतों के उल्लेख से ज्ञात होता है।

शाकटायन निश्चित रूप से पाणिनि से पूर्व के वैयाकरण थे, जैसा कि निरुक्तकार यास्क ने लिखा है। शाकटायन का मत था कि सब संज्ञा-शब्द धातुओं से बनते हैं। पाणिनि ने इस मत को स्वीकार किया किन्तु इस विषय में कोई आग्रह नहीं रखा और यह भी कहा कि बहुत से शब्द ऐसे भी हैं जो लोक की बोलचाल में आ गए हैं और उनसे धातु- प्रत्यय की पकड़ नहीं की जा सकती।

तीसरी सबसे महत्वपूर्ण बात पाणिनि ने यह की कि उन्होंने स्वयं लोक को अपनी आँखों से देखा और ज़गह-ज़गह घूमकर लोगों के बहुमुखी जीवन का परिचय प्राप्त करके शब्दों को छाना। इस प्रकार से कितने ही सहस्र शब्दों को उन्होंने इकट्ठा किया। शब्दों का संकलन करके उन्होंने उनको वर्गीकृत किया और उनकी कई सूचियाँ बनाई।

आचार्य पाणिनि की चार सूचियाँ

पहली सूची 'धातुपाठ' की थी जिसे पाणिनि ने अष्टाध्यायी से अलग रखा है। उसमें १९४३ धातुएँ हैं। धातुपाठ में दो प्रकार की धातुएँ हैं - एक, जो पाणिनि से पहले साहित्य में प्रयुक्त हो चुकी थीं और दूसरी वे, जो लोगों की बोलचाल में उन्हें मिली।

उनकी दूसरी सूची में वेदों के अनेक आचार्य थे। किस आचार्य के नाम से कौन सा चरण प्रसिद्ध हुआ और उसमें पढ़नेवाले छात्र किस नाम से प्रसिद्ध थे और उन छन्द या शाखाओं के क्या नाम थे, उन सब की निष्पत्ति भिन्न-भिन्न प्रत्यय लगाकर पाणिनि ने दी है; जैसे एक आचार्य तित्तिरि थे। उनका चरण तैत्तिरीय कहा जाता था और उस गुरुकुल या विद्यालय के छात्र एवं वहाँ की शाखा या संहिता भी तैत्तिरीय कहलाती थी।

पाणिनि की तीसरी सूची "गोत्रों" के सम्बन्ध में थी। मूल सात गोत्र वैदिक युग से ही चले आते थे। पाणिनि के काल तक आते-आते उनका बहुत विस्तार हो गया था। गोत्रों की कई सूचियाँ श्रौतसूत्रों में हैं। जैसे बोधायन श्रौतसूत्र में जिसे महाप्रवर कांड कहते हैं किन्तु पाणिनि ने वैदिक और लौकिक दोनों भाषाओं के परिवार या कुटुम्ब के नामों की एक बहुत बड़ी सूची बनाई जिसमें आर्षगोत्र और लौकिकगोत्र दोनों है। अनेकों सूत्रों के साथ लगे हुए गणों में गोत्रों के अनेक नाम पाणिनि के 'गणपाठ' नामक परिशिष्ट ग्रन्थ में हैं।

पाणिनि की चौथी सूची भौगोलिक थी। पाणिनि का जन्मस्थान उत्तर-पश्चिम में था, जिस प्रदेश को हम गांधार कहते हैं। यूनानी भूगोल-लेखकों ने लिखा है कि उत्तर-पश्चिम अर्थात् गांधार और पंजाब में लगभग ५०० ऐसे ग्राम थे जिनमें से प्रत्येक की जनसंख्या दस सहस्र के लगभग थी। पाणिनि ने उन ५०० ग्रामों के वास्तविक नाम भी दे दिए हैं जिनसे उनके भूगोल सम्बन्धी गणों की सूचियाँ बनी हैं। ग्रामों और नगरों के उन नामों की पहचान कठिन है, किन्तु यदि बहुत परिश्रम किया जाय तो यह संभव है, जैसे सुनेत और सिरसा पंजाब के दो छोटे गाँव हैं, जिन्हें पाणिनि ने सुनेत्र और शैरीषक कहा है।

इस शब्दशास्त्र को शब्दानुशासन भी कहा जाता है

पाणिनि का व्याकरण शब्दानुशासन के नाम से विद्वानों में प्रसिद्ध है, परन्तु आठ अध्यायों में विभक्त होने के कारण यही शब्दानुशासन लोक में अष्टाध्यायी अथवा पाणिनीयाष्टक के रूप में भी जाना जाता है। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी से संस्कृत भाषा को अमरता प्रदान की। उनकी व्याकरण की रीति से संस्कृत भाषा के सभी अङ्ग आलोकित हो उठे। सर्वशास्त्रोपकारक के रूप में पाणिनीय अष्टाध्यायी की सहायता से हमें कहीं भी

अपना मार्ग ढूँढ़ने में कठिनाई नहीं होती है। संसार की अनेक भाषाएं नियमित व्याकरण के अभाव में या तो लुप्त हो गईं हैं, या इतनी दुरूह हैं कि उन्हें समझना ही दुष्कर है, किन्तु संस्कृत भाषा के गद्य और पद्य दोनों पाणिनिशास्त्र से नियमित होने के कारण सदा ही सुबोध बने रहे हैं। आज भी हम पाणिनीय अष्टाध्यायी की सहायता से संस्कृत के प्राचीनतम साहित्य से लेकर नवीनतम रचनाओं का रसास्वाद कर सकते हैं।

अष्टाध्यायी का चौथा और पाँचवा अध्याय

पाणिनि ने सहस्रों शब्दों की व्युत्पत्ति बताई जो अष्टाध्यायी के चौथे व पाँचवें अध्यायों में है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, सैनिक, व्यापारी, किसान, रँगरेज, बढ़ई, रसोइए, मोची, ग्वाले, चरवाहे, गड़रिये, बुनकर, कुम्हार आदि सैकड़ों पेशेवर लोगों से मिलजुलकर पाणिनि ने उनके विशेष पेशे के शब्दों का संग्रह किया। पाणिनि ने यह बताया कि किस शब्द में कौन सा प्रत्यय लगता है। वर्णमाला के स्वर और व्यंजन रूप जो अक्षर हैं, उन्हीं से प्रत्यय बनाए गए। जैसे- वर्षा से वार्षिक, यहाँ मूलशब्द वर्षा है, उससे इक् प्रत्यय जुड़ गया और वार्षिक अर्थात् वर्षासम्बन्धी - यह शब्द बन गया।

पाणिनि और आधुनिक भाषाविज्ञान

आधुनिक भाषाविज्ञान में भाषा की उत्पत्ति, स्वरूप, विकास आदि का वैज्ञानिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाता है। आधुनिक भाषाविज्ञानियों के अनुसार भाषाविज्ञान, व्याकरण से भिन्न है। व्याकरण में किसी भाषा का कार्यात्मक अध्ययन किया जाता है जबकि भाषाविज्ञानी भाषा का अत्यन्त व्यापक अध्ययन करता है। अध्ययन के अनेक विषयों में से आजकल भाषा-विज्ञान को विशेष महत्त्व दिया जा रहा है।

अपने वर्तमान स्वरूप में भाषा विज्ञान पश्चिमी विद्वानों के मस्तिष्क की देन कहा जाता है। अति प्राचीनकाल से ही भाषा-सम्बन्धी अध्ययन की प्रवृत्ति संस्कृत-साहित्य में पाई जाती है। संस्कृत-साहित्य के दर्शन एवं साहित्यशास्त्रीय ग्रन्थों में भी हमें शब्द, अर्थ, रस, भाव आदि के सूक्ष्म विवेचन के अन्तर्गत भाषा की वैज्ञानिक चर्चाओं के ही संकेत प्राप्त होते हैं । संस्कृत-साहित्य में यत्र-तत्र उपलब्ध होने वाली भाषा-विचार-विषयक सामग्री ही निश्चित रूप से वर्तमान भाषा-विज्ञान की आधारशिला कही जा सकती है।

आधुनिक विषय के रूप में भाषा-विज्ञान का सूत्रपात यूरोप में सन् १७८६ ई० में सर् विलियम जोन्स् नामक विद्वान द्वारा किया गया माना जाता है। संस्कृत भाषा के अध्ययन

के प्रसंग में सर् विलियम जोन्स् ने ही सर्वप्रथम संस्कृत, ग्रीक और लैटिन भाषा का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए इस संभावना को व्यक्त किया था कि संभवतः इन तीनों भाषाओं के मूल में कोई एक भाषारूप ही आधार बना हुआ है। अतः इन तीनों भाषाओं (संस्कृत, ग्रीक और लैटिन) के बीच एक सूक्ष्म सम्बन्धसूत्र अवश्य विद्यमान है। भाषाओं का इस प्रकार का तुलनात्मक अध्ययन ही आधुनकि भाषा-विज्ञान के क्षेत्र का पहला कदम बना। पाश्चात्य और पौर्वात्य अनेक प्रसिद्ध भाषाविज्ञानियों ने इस क्षेत्र में प्रशंसनीय कार्य किया है किन्तु विस्तार-भीति के कारण कुछेक नामों का ही उल्लेख सम्भव है ।

भाषा यानि व्यक्त वाणी

हमारे सभी सद्ग्रन्थों और शास्त्रों से मिलने वाला ज्ञान भाषा पर ही निर्भर है। महाकवि दण्डी ने अपने महान् ग्रन्थ 'काव्यादर्श' में भाषा की महत्ता सूचित करते हुए लिखा है-

इदमन्धतमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम्।

यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते।।

[अर्थात् यह सम्पूर्ण भुवन [तीनों लोक] अन्धकारपूर्ण हो जाता, यदि संसार में शब्द-स्वरूप ज्योति अर्थात् भाषा का प्रकाश न होता।] स्पष्ट ही है कि यह कथन मानवभाषा को लक्ष्य करके ही कहा गया है। पशु-पक्षी भावों को प्रकट करने के लिए जिन ध्वनियों का आश्रय लेते हैं वे उनके भावों का वहन करने के कारण उनके लिए भाषा हो सकती हैं किन्तु मानव के लिए अस्पष्ट होने के कारण विद्वानों ने उसे 'अव्यक्त वाक्' कहा है, जो भाषा-विज्ञान की दृष्टि से कोई महत्त्व नहीं रखती, क्योंकि 'अव्यक्त वाक्' में शब्द और अर्थ दोनों ही अस्पष्ट बने रहते हैं। मनुष्य भी कभी-कभी अपने भावों को प्रकट करने के लिए अंग-भंगिमा, भ्रू-संचालन, हाथ-पाँव-मुखाकृति आदि के संकेतों का प्रयोग करते हैं परन्तु वह भाषा के रूप में होते हुए भी 'व्यक्त वाक्' नहीं है। मानव भाषा की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि वह 'व्यक्त वाक्' अर्थात् शब्द और अर्थ की स्पष्टता लिए हुए होती है। महाभाष्य के रचयिता पतंजलि के अनुसार 'व्यक्त वाक्' का अर्थ भाषा के वर्णनात्मक होने से ही है।

यह सत्य है कि कभी-कभी संकेतों और अंगभंगिमाओं की सहायता से भी हमारे भाव और विचारों का सम्प्रेषण बड़ी सरलता से हो जाता है। इस प्रकार वे चेष्टाएँ भाषा की प्रतीक बन जाती हैं किन्तु मानव भावों को प्रकट करने का सबसे उपयुक्त साधन वह

वर्णनात्मक भाषा है जिसे 'व्यक्त वाक्' की संज्ञा प्रदान की गई है। इस में विभिन्न अर्थों को प्रकट करने के लिए कुछ निश्चित उच्चरित या कथित ध्वनियों का आश्रय लिया जाता है। अतः भाषा हम उन शब्दों के समूह को कहते हैं जो विभिन्न अर्थों के संकेतों से सम्पन्न होते हैं। जिनके द्वारा हम अपने मनोभाव सरलता से दूसरों के प्रति प्रकट कर सकते हैं। इस प्रकार भाषा की परिभाषा करते हुए हम उसे मानव-समाज में विचारों और भावों का आदान-प्रदान करने के लिए अपनाया जाने वाला एक माध्यम कह सकते हैं जो मानव के उच्चारण अवयवों से प्रयत्नपूर्वक निःसृत की गई ध्वनियों का सार्थक आधार लिए रहता है। ये ध्वनि-समूह शब्द का रूप तब लेते हैं जब वे किसी अर्थ से जुड़ जाते हैं। सम्पूर्ण ध्वनि-व्यापार अर्थात् शब्द-समूह अपने अर्थ के साथ एक 'यादृच्छिक' सम्बन्ध पर आधारित होता है। 'यादृच्छिक' का अर्थ है पूर्णतया कल्पित। संक्षेप में विभिन्न अर्थों में व्यक्त किये गए मुख से उच्चरित उस शब्द समूह को हम भाषा कहते हैं जिसके द्वारा हम अपने भाव और विचार दूसरों तक पहुँचाते हैं।

आधुनिक पाणिनि - आचार्य किशोरीदास वाजपेयी

आचार्य किशोरीदास वाजपेयी को 'हिन्दी का पाणिनि' कहा जाता है। अपनी तेजस्विता व प्रतिभा से उन्होंने साहित्यजगत् को आलोकित किया और एक महान् भाषा [हिन्दी] के स्वरूप को सुनिर्धारित किया। आचार्य किशोरीदास बाजपेयी ने हिन्दी को परिष्कृत रूप प्रदान करने में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इनसे पूर्व खड़ीबोली हिन्दी का प्रचलन तो हो चुका था पर उसका कोई व्यवस्थित व्याकरण नहीं था। अत: आचार्य वाजपेयी अपने अथक प्रयास एवं ईमानदारी से भाषा का परिष्कार करते हुए व्याकरण का एक सुव्यवस्थित रूप निर्धारित कर भाषा का परिष्कार तो किया ही साथ ही नये मानदण्ड भी स्थापित किये। स्वाभाविक है भाषा को एक नया स्वरूप मिला। अत: हिन्दीक्षेत्र में आपको 'पाणिनि' संज्ञा से अभिहित किया जाने लगा।

उपसंहार

पाणिनि ने संस्कृत भाषा को एक अलौकिक एवं अद्भुत शास्त्र प्रदान किया। इस शास्त्र के विधि-विधान, पाणिनि ने अत्यन्त विचार पूर्वक स्थिर किए थे। विवादास्पद मतों के बीच पाणिनि समन्वय और सन्तुलन का मध्यमार्ग स्वीकार करते हैं। पाणिनि के काल में व्याकरण–सम्बन्धी अनेक मत–मतान्तर प्रचलित थे। उदाहरणार्थ – व्याकरण में स्वाभाविक या प्रचलित संज्ञा उचित है या कृत्रिम संज्ञा, शब्द का अर्थ जाति है या व्यक्ति, अनुकरणात्मक

शब्दों का अस्तित्व है या नहीं, उपसर्ग, वाचक है या द्योतक, धातु का अर्थ क्रिया है या भाव, शब्द व्युत्पन्न होते हैं या अव्युत्पन्न आदि । पाणिनि, इनमें से किसी भी एक मत का निराकरण नहीं करते, अपितु वे इनके समन्वय का मार्ग स्वीकार करते हैं। समस्त अष्टाध्यायी में समन्वयात्मक और सन्तुलित दृष्टि की प्रधानता है। इस कारण यह शास्त्र इतनी विशाल शब्द–सामग्री को समेटने, नवीन शब्द–भण्डार को अपने में स्थान देने और सूत्रबद्ध करने में सफल हुआ। इसी कारण इसे लोक में इतनी अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त हुई और पाणिनि का नाम बच्चे–बच्चे तक पहुँच गया –'आकुमारं यशः पाणिनेः'।

मेरे इस वक्तव्य में अभी ऐसे अनेक बिन्दु शेष रहते हैं जिनको उपस्थापित करके 'पाणिनि : भाषाविज्ञान' इस विषय को समुचित न्याय दिया जा सकता है लेकिन सीमित समय में यह सम्भव नहीं | इसीलिए आरम्भ में गोस्वामीजी को याद करके इस विशालकाय विषय को समेटने के लिए - 'वर्णानामर्थ-सङ्घानां रसानां छन्दसामपि | मङ्गलानाञ्च कर्त्तारौ वन्दे वाणी-विनायकौ ||'- इस मंगल श्लोक के माध्यम से अपने इस वक्तव्य को विराम देता हूँ | धन्यवाद ! जय सियाराम !!

+++ +++ +++ +++ +++

***** बलदेवानन्द-सागरः

दूरभाष - ९८१० ५६२२ ७७

अणुप्रैषः - baldevanand.sagar@gmail.com